Research Reinforcement | A Peer Reviewed International Refereed Journal | ISSN 2348-3857
Vol. 11, Issue 2 | November 2023 - April 2024 | pp. 19-22

पं. दीनदयाल उपाध्याय के शैक्षिक विचार

Research Reinforcement
ISSN 2348-3857

डॉ. सुभाष चन्द्र

सहायक आचार्य, बी.एड. विभाग, दिग्विजयनाथ पी.जी. कॉलेज, गोरखपुर (उत्तर प्रदेश)

श्री राकेश कुमार सिंह

सहायक आचार्य, बी.एड. विभाग, दिग्विजयनाथ पी.जी. कॉलेज, गोरखपुर (उत्तर प्रदेश)

शोध सारांश

पं. दीनदयाल उपाध्याय बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी थे। उनके शैक्षिक, सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक विचार वर्तमान समय में भी उतने ही प्रासंगिक हैं, जितने कि आजादी के समय थे। उनके अनुसार राष्ट्र एवं समाज की उन्नति के मूल में शिक्षा व्यवस्था है। आधुनिक शिक्षा प्रणाली में व्याप्त समस्याओं के निवारण में पण्डित के विचार सहायक हैं। पण्डित के अनुसार शिक्षा प्रक्रिया त्रिमुखी होती है। शिक्षा प्रक्रिया में विद्यार्थी, शिक्षक तथा स्वतन्त्रता एवं अनुशासन तीनों का अत्यन्त महत्व है। उपाध्याय आदर्शवादी शिक्षा के हिमायती थे। पं. दीनदयाल उपाध्याय के अनुसार शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य है विद्यार्थी में सामाजिक चेतना का भाव जाग्रत करना। उन्होंने शिक्षा एवं संस्कार के द्वारा विद्यार्थी में समाज के मूल्यों को विकसित करने पर बल दिया। वर्तमान समय में समाज में व्यक्ति के चरित्र एवं संस्कारों का ह्रास होता जा रहा है। आधुनिक समय में विद्यार्थियों में चरित्र के विकास पर बल देने की आवश्यकता है। पं. दीनदयाल उपाध्याय के विचारों का शिक्षा में प्रयोग करके विद्यार्थी का सर्वांगीण विकास करने के साथ ही साथ उनके व्यक्तित्व में नैतिक मूल्यों का विकास कर सकते हैं। वर्तमान समय में पं. दीनदयाल उपाध्याय के शैक्षिक विचार प्राथमिक शिक्षा, माध्यमिक शिक्षा तथा उच्च शिक्षा में आज भी प्रासंगिक हैं।

संकेताक्षर—*छात्र संकल्पना, एकात्म मानववाद, लोक शिक्षण, चरित्र विकास*

प्रस्तावना

पं. दीनदयाल उपाध्याय का उत्थान 20वीं सदी के उत्तरार्द्ध में हुआ था। इस काल खण्ड में पश्चिम का ज्ञान-विज्ञान पश्चिम के साम्राज्यवाद के माध्यम से एशिया एवं अफ्रीकी महाद्वीपों में पहुँचा। पश्चिम के विचार से भारतीय राष्ट्रवादी मानस पश्चिमी साम्राज्य के साथ-साथ पश्चिमी ज्ञान की प्रभुता को स्वीकारना अपने स्वाभिमान पर चोट मानते थे। राष्ट्रवादी समाज ने पश्चिम के ज्ञान को नकारा। दीनदयाल उपाध्याय इसी भारतीय राष्ट्रवाद से उत्पन्न विचारक थे, इसी कारण से उपाध्याय की शैक्षिक संकल्पना राष्ट्रवाद एवं राष्ट्र प्रेम से ओत-प्रोत थी। वे भावी पीढियों को राष्ट्रवादी शिक्षा प्रदान करने के हिमायती थे।

पं. दीनदयाल उपाध्याय के अनुसार शिक्षा की सम्पूर्ण व्यवस्था समाज द्वारा की जानी चाहिए। पण्डित का यह मानना था कि यदि धन के अभाव में छात्र को शिक्षा प्राप्त नहीं हो पाई तो हमारा समाज पशु समाज बन जाएगा। वर्तमान समय में यह आशंका किसी हद तक सही भी साबित हो रही है। आज समाज ने अंग्रेजी भाषा व महंगे विद्यालयों को अपनी सामाजिक-आर्थिक स्थिति को उच्च बनाये रखने हेतु इस्तेमाल करना सीख लिया है। जबकि उपाध्याय अपनी संस्कृति एवं भाषा को ही सर्वोपरि मानते थे। उनके अनुसार "अपनी राष्ट्रीय पहचान की उपेक्षा करना भारत की समस्याओं का मूल कारण है।" उपाध्याय रुढ़िवादी न होकर प्रगतिगामी थे। वे भारत को किसी और की प्रति छाया नहीं बनाना चाहते थे। बल्कि वे भारत को युगानुकुल बनाने के पक्षधर थे। उनकी विशुद्ध भारतीयता एवं मानवीय संवेदना 'एकात्म मानववाद' में स्पष्ट रूप से दिखाई देती है।

ISSN 2348-3857

पं. दीनदयाल उपाध्याय के शैक्षिक विचार

उपाध्याय के अनुसार शिक्षा की प्रक्रिया में ज्ञान व चिन्तन की प्रक्रिया अत्यन्त महत्वपूर्ण है। वे शिक्षण पद्धति में स्वाध्याय से प्राप्त ज्ञान को ही स्थायी मानते थे। उनके अनुसार, "स्वाध्याय के लिए आवश्यक है कि आपके पास ज्ञान प्राप्ति के लिए पुस्तकें आदि हों।" उपाध्याय ने शिक्षा की प्रक्रिया को त्रिमुखी माना है, जिसके तीन ध्रुव अंग होते हैं—विद्यार्थी, शिक्षक तथा स्वतन्त्रता एवं अनुशासन। ये तीनों अंग आपस में अंतर्संबंधित होते हैं।

छात्र की संकल्पना—उपाध्यायजी आदर्शवादी विचारधारा के व्यक्ति थे। उनके शैक्षिक विचारों पर वैदिक परम्परा का अत्यधिक प्रभाव दिखाई पड़ता है। उनके अनुसार विद्यार्थी को गुरु के प्रति पूर्णतरू समर्पित होना चाहिए। विद्यार्थी को "काक चेष्टा वको ध्यानं स्वान निद्रा तथैव च, अल्पहारी गृहत्यागी विद्यार्थी पञ्चलक्षणं" से विभूषित होना चाहिए। विद्यार्थी के अन्दर अपने राष्ट्र व संस्कृति के प्रति अपार सम्मान व प्रेम होना चाहिए। उपाध्यायजी वैदिककालीन गुरुकुल परम्परा की भाँति आज के विद्यार्थियों को देखना चाहते थे, किन्तु इसके बावजूद भी इनके विचारों में कहीं भी रूढ़िवादिता नजर नहीं आती। वे विद्यार्थियों को युग अनुकूल बनाना चाहते थे। उपाध्याय राष्ट्र के सभी छात्र को बिना किसी भेदभाव के निरू शुल्क शिक्षा प्रदान करने के पक्षधर थे। वे वैदिककालीन गुरु-शिष्य सम्बन्ध की भांति ही वर्तमान शिक्षा प्रणाली में गुरु-शिष्य सम्बन्ध पिता-पुत्र की ही तरह देखना चाहते थे। गुरु का अपने शिष्यों के प्रति तथा शिष्यों का अपने गुरु के प्रति जो कर्तव्य होता है, उसका निर्वाह उन्हें ईमानदारीपूर्वक करना चाहिए।

शिक्षक सम्बन्धी विचार—उपाध्याय शिक्षा की प्रक्रिया में शिक्षक को महत्वपूर्ण मानते थे। उनकी मान्यता थी कि शिक्षा के व्यापक अर्थों में समाज का प्रत्येक घटक ही शिक्षक है। प्रथम शिक्षक समाज, द्वितीय शिक्षक अध्यापक, तृतीय व्यक्ति स्वयं शिक्षक है। दीनदयाल जी ने शिक्षक-प्रशिक्षण महाविद्यालय में प्रवेश लिया और वहाँ के अनुभव को 'ऑर्गेनाइजर' नामक लेख में बताया, "यथासमय मैंने प्रशिक्षण महाविद्यालय में प्रवेश लिया। वहाँ मैंने देखा कि, शिक्षण का यह उदान्त कार्य आज आदर्शवादी और सेवा भावी लोगों को आकर्षित नहीं कर पा रहा है। केवल वही लोग जो अन्यत्र स्थान पाने में असमर्थ होते हैं, अध्यापक बन जाते हैं। भारतीय नागरिक सेवाओं आई.ए.एस. से लेकर नायब तहसीलदार तक के विभिन्न परीक्षाओं में ये प्रशिक्षणार्थी बैठते थे लेकिन उनमें से जो अनुत्तीर्ण हो जाते थे वही अध्यापक बनने की बात सोचते थे। जिस अध्यापक को प्राचीन भारतीय सामाजिक व्यवस्था में 'आचार्य देवो भव' कहा गया उसके आभामंडल का यह अपखंडन बहुत ही चिंताजनक है। यदि समाज को सही अर्थों में सुशिक्षित करना है तो अध्यापक की गरिमा को पुनःस्थापित करना होगा।"

उपाध्यायजी के अनुसार वर्तमान में हमें भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता को बचाने हेतु कुशल शिक्षकों की आवश्यकता है, जो न केवल शिक्षक-प्रशिक्षण की अर्हताओं को पूरा करता हो बल्कि मन, वचन एवं कर्म से भी शिक्षक हो। जिनमें केवल धन कमाने की लालसा न हो अपितु शिक्षण व समाज के प्रति समर्पण भाव भी हो। उपाध्याय का मानना था कि, शिक्षा के व्यापक एवं दूरगामी अर्थों को समझने वाला व्यक्ति ही शिक्षक बने। शिक्षक को उन्होंने शिक्षा का महत्वपूर्ण अंग बताया। शिक्षक के बिना समस्त शैक्षिक एवं भौतिक संसाधन निरर्थक होते हैं। शिक्षक को योग्य एवं चरित्रवान होना चाहिए जो भौतिक संसाधनों के अभाव में भी छात्रों को उत्तम शिक्षा प्रदान कर सके। अध्यापक-शिष्य का 'पिता-पुत्र' जैसा स्नेहपूर्ण सम्बन्ध वैदिक शिक्षा की भांति ही आधुनिक शिक्षा प्रणाली में भी होना चाहिए।

स्वतन्त्रता एवं अनुशासन—पण्डित ने स्वयं पर स्व के शासन को ही स्वतंत्रता की संज्ञा दी है, तथा अनुशासन में बाहरी व्यवस्था, बाहरी व्यवहार, आन्तरिक प्रेरणा, अहं नियन्त्रण, अहं संयम तथा विनय को सम्मिलित किया है। इस प्रकार पण्डित ने मनुष्य द्वारा समाज सम्मत आचरण करने को ही अनुशासन कहा है। यह आचरण केवल छात्रों के लिए ही नहीं अपितु समाज के प्रत्येक नागरिक के लिए आवश्यक है। उपाध्याय यह मानते थे कि समाज में संयम एवं अनुशासन बनाये रखने हेतु हमें समाज में शाश्वत जीवन मूल्यों को स्थापित करना होगा। शाश्वत जीवन मूल्यों को शिक्षा द्वारा ही सुगमता से स्थापित किया जा सकता है। जैसा की यह सर्वविदित है कि कक्षा समाज का लघु रूप है, आज बालक जो कुछ भी कक्षा में ग्रहण कर रहा है, वह कल वही कुछ अपने समाज को देगा। अतः शिक्षा एवं शिक्षक की यह नैतिक जिम्मेदारी बनती है कि वह आज के युवा को अपनी संस्कृति का रक्षक बनायें, उनमें राष्ट्रभक्ति की भावना का

विकास करें, तथा उन्हें स्वतन्त्रता का सही अर्थ समझायें। जिससे उपाध्याय का 'भारत पुनर्निर्माण' का स्वप्न साकार हो सके। जैसा कि उपाध्याय ने कहा भी है कि, "आजादी सार्थक तभी हो सकती है, जब यह हमारी संस्कृति की अभिव्यक्ति का साधन बन जाए।"

शिक्षा का माध्यम—पण्डितजी भाषा की अपरिहार्यता को स्वीकार करते हुए कहते हैं कि, शिक्षा का माध्यम स्वभाषा ही हो सकती है। दीनदयाल जी के समय तत्कालीन शिक्षा मंत्री त्रिगुण सेन ने प्रस्ताव दिया कि मातृभाषा के साथ-साथ हिन्दी अथवा अंग्रेजी में से कोई एक भाषा शिक्षा का माध्यम रहे। इस द्विभाषीय भाषा-सूत्र की दीनदयाल जी ने आलोचना करते हुए कहा कि हिन्दी, अंग्रेजी में से स्वेच्छा से किसी एक भाषा को पढ़ने की बात धोखा है, क्योंकि जब तक काम-काज में अंग्रेजी है, विद्यार्थी अंग्रेजी ही पढ़ना चाहेंगे। इससे स्पष्ट है कि दीनदयाल जी प्रारम्भिक दौर में राष्ट्र भाषा हिन्दी के माध्यम से ही शिक्षा प्रदान किए जाने के पक्षधर है।

एकात्म मानववाद—उपाध्यायजी के अनुसार एकात्म मानववाद का शाब्दिक अर्थ है-'मानव में शरीर, मस्तिष्क, बुद्धि और आत्मा को चार पुरुषार्थ—धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष से एकमत होते हुए उसके अनुरूप होना।' यह दर्शन मानव जाति की मानसिक स्वतन्त्रता तथा उसके पशुत्व से मनुष्यत्व और फिर मनुष्यत्व से देवत्व तक के सफर की संरचना प्रस्तुत करती है। वास्तव में यह मानव के सर्वोच्च आत्मिक व मानसिक विकास का दर्शन है। यह एक ऐसा नवीन घोषणापत्र है जिसमें भौतिक तत्वों पर नैतिक मूल्यों की सर्वोच्चता सम्पूर्ण एवं निर्विवाद है। इस प्रकार उपाध्याय एकात्म मानववाद के माध्यम से युवावों को शरीर, मन, बुद्धि व आत्मा से एकरूपी बनाना चाहते थे। क्योंकि शरीर, मन, बुद्धि व आत्मा से एकरूप रहने वाला व्यक्ति ही सुख और शान्ति का अनुभव कर पायेगा और अपने राष्ट्र के विकास में अपना योगदान कर पायेगा। उपाध्यायजी शिक्षा के माध्यम से व्यक्ति को इस योग्य बनाना चाहते थे कि वह राष्ट्र के विकास में अपना अमूल्य योगदान दे सके, क्योंकि किसी भी राष्ट्र को आगे ले जाने में उस राष्ट्र के नागरिकों का प्रमुख योगदान होता है। नागरिकों को अपने सामाजिक तथा सांस्कृतिक आदर्शों के अनुकूल व्यहार करने योग्य बनाने हेतु शिक्षा की आश्यकता होती है। शिक्षा के द्वारा ही व्यक्ति एवं समाज में वांछित परिवर्तन लाये जा सकते हैं।

लोक शिक्षण—दीनदयाल उपाध्याय लोकतन्त्र के कट्टर समर्थक थे तथा लोकतन्त्र की सफलता के लिए वे लोक शिक्षण को अनिवार्य मानते। वे मानते थे कि जन-आन्दोलन का प्रभाव अन्त में लोक शिक्षण के स्तर पर निर्भर करता है। उनके अनुसार लोक शिक्षण का अर्थ केवल प्रचार नहीं होता। वे कहा करते थे कि रचनात्मक विचार करने वाले दलों एवं नेताओं की संख्या प्रतिदिन कम होती जा रही है और यह बात लोकतन्त्र के भविष्य की दृष्टि से चिन्ताजनक है। वे सोचते थे कि केवल सत्ता के पीछे दौड़ने वाला राजनीतिक व्यक्ति यथार्थ में लोक-शिक्षण का काम नहीं कर सकेगा। जिसे सत्तारूढ़ होने की कत्तई इच्छा नहीं है, वही हृदय से लोक शिक्षण का कार्य कर सकेगा। यथार्थ में लोक-शिक्षण का कार्य राजनैतिक नेताओं के लिए सुविधाजनक नहीं होता। आज पश्चिमी देशों के साथ ही साथ भारत में भी भौतिकता प्रधान अधिकारवाद का बोलबाला है तथा भारतीय सुशिक्षित लोग भी अधिकारवादी हैं। विचार के इस लहर के विरुद्ध खड़े होकर भारतीय संस्कृति के कर्तव्य धर्म के विचार का प्रतिपादन करना इतना सरल नहीं था किन्तु सस्ती लोकप्रियता की कीमत देकर भी उपाध्याय ने कर्तव्य धर्म की घोषणा की। वे मानते थे कि लोक शिक्षण के अभाव में, जैसा की बिल ट्यूरेन्ट ने भी कहा है—'यदि क्रान्तिकारी सफल हो गये तो वे उन्हीं लोगों की नीति एवं मार्ग का अनुशरण करते हैं जिन्हें उन्होंने अपदस्थ किया था।' इस प्रकार उपाध्याय ने लोकशिक्षण के सन्दर्भ में जो विचार व्यक्त किये, वे आज भी प्रासंगिक हैं। वर्तमान समय में भारत में राजनीतिक क्षेत्र में मूल्यों का ह्रास होने से जो स्थान रिक्त हुआ है, उस स्थान की भरपाई एवं मूल्यों का उत्थान लोक-शिक्षण के माध्यम से किया जा सकता है।

औद्योगिक शिक्षा—उपाध्याय औद्योगिक शिक्षा के पक्षधर थे। उन्होंने अपने आर्थिक विचार व्यक्त करते हुए कहा था कि, अक्षर और साहित्य ज्ञान के साथ-साथ यह भी आवश्यक है कि विद्यार्थी को किसी न किसी प्रकार की औद्योगिक शिक्षा भी दी जाये। वे कहते थे कि औद्योगिक शिक्षा को प्रदान करने पर विचार बहुत दिनों से हो रहा है, किन्तु अभी तक केवल कुछ औद्योगिक शिक्षा केन्द्रों के खुलने के अलावा साधारण शिक्षा का मेल औद्योगिक शिक्षा से नहीं बैठाया गया। तकनीकी और व्यावसायिक शिक्षा केन्द्रों में भी शिक्षा प्राप्त नवयुवक इस योग्य नहीं बन पाते कि वह स्वयं कोई कारोबार प्रारम्भ कर सकें।

वह भी नौकरी की तलाश में घूमते हैं। इसका कारण यह है कि, जिस प्रकार की उन्हें शिक्षा उन्हें प्रदान की जाती है, वह उनको अपने पैरों पर खड़ा होने के योग्य नहीं बना पाती है।

औद्योगिक शिक्षा से सम्बन्धित उपरोक्त समस्याओं के समाधान हेतु उपाध्याय ने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा है कि, गाँव के कुटीर उद्योग एवं धन्धे, खेती और व्यापार के साथ-साथ शिक्षा का मेल बैठाना होगा। शिक्षा की प्रारम्भिक एवं माध्यमिक अवस्थाओं में हमें विद्यार्थी को उनके घरेलू धंधों के वातावरण से अलग करने की जरुरत नहीं है, बल्कि हमेशा प्रबन्ध करें कि वह उस वातावरण में अधिक से अधिक रह सके तथा अज्ञात रूप से वह उस धंधे को सीख सके। धीरे-धीरे हमें यह भी प्रयत्न करना होगा कि अपने अभिभावकों का सहयोगी बन सके। माध्यमिक शिक्षा पूरी करने तक नवयुवकों को अपना घरेलू व्यवसाय/धन्धा भी सीख लेना चाहिए। माध्यमिक शिक्षा तक कुशाग्र बुद्धि वाले नवयुवकों को आगे की शिक्षा का प्रबन्ध उनकी रूचि के अनुसार किया जाए।

निष्कर्ष

आज सम्पूर्ण विश्व में पूर्व की शताब्दी से ज्यादा शिक्षा है, ज्यादा विद्यालय, महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालय हैं लेकिन वर्तमान समय में पिछली सदी से अधिक अशान्ति, दुःख, ईर्ष्या एवं संघर्ष है। इस प्रकार की स्थिति से बाहर आने के लिए उपाध्याय के शाश्वत मूल्यों पर आधारित एकात्म मानव दर्शन के अनुरूप शिक्षा की व्यवस्था करना एक सही मार्ग हो सकता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 में भी दीनदयाल उपाध्याय के विचारों को महत्व दिया गया है। नई शिक्षा नीति में प्राथमिक शिक्षा, माध्यमिक शिक्षा, व्यावसायिक शिक्षा, उच्च शिक्षा, तकनीकी शिक्षा तथा शिक्षक शिक्षा में उपाध्यायजी के विचारों को महत्व देते हुए विभिन्न अनुशंसाएँ की गई हैं, जिससे वर्तमान शिक्षा प्रणाली की कमियों को दूर किया जा सके तथा हम अपने शैक्षणिक संस्थानों को विश्वस्तरीय बना सकें। निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि पण्डित दीनदयाल उपाध्याय के शैक्षिक विचार वर्तमान समय में अति प्रासंगिक है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. मिश्र, ए.डी., सिंह, पी., एवं गुप्ता, जे., दीनदयाल उपाध्याय एक अध्ययन, कंसेप्ट पब्लिशिंग कम्पनी प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 2019
2. त्यागी, आर.के., दीनदयाल उपाध्याय का अर्थ दर्शन और उनकी आर्थिक विकास की संकल्पना - एक विश्लेष्णात्मक विवेचना, पी.एच.डी. शोध प्रबन्ध, दीनदयाल उपाध्याय ग्राम्य विकास संस्थान, डॉ.भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, आगराए 2002।
3. कौशिक, कमल, प. दीनदयाल उपाध्याय के दार्शनिक और शैक्षिक विचार एवं वर्तमान परिप्रेक्ष्य में उनकी प्रासंगिकता, मयूर एंटरप्राइजेज, नई दिल्ली, 2016
4. शर्मा, महेश चन्द्र (सं), दीनदयाल उपाध्याय संपूर्ण वाँग्मय, प्रभात प्रकाशन एवं एकात्म मानवदर्शन एवं विकास प्रतिष्ठान, दिल्ली, 2016
5. नेने, विनायक वासुदेव, पंडित दीनदयाल उपाध्याय विचार-दर्शन, खंड-2, एकात्म मानवदर्शन, सुरुचि प्रकाशन, नई दिल्ली, 2015
6. केलकर, बी.के., पंडित दीनदयाल उपाध्याय विचार-दर्शन मानवदर्शन, खंड-3, चिंतन, सुरुचि प्रकाशन, नई दिल्ली, 2016
7. एकात्म-एक समावेशी पथ...., मासिक पत्र, शैक्षिक चिन्तन, प्रकाशक : दीनदयाल उपाध्याय शोध पीठ, दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर, अंक-02, अक्टूबर, 2020
8. रूबी, शिक्षा क्षेत्र एवं पण्डित दीनदयाल उपाध्याय के विचार, 2020 रिट्राइव्ड फ्रॉमः एचटीटीपीएसः//डब्ल्यू डब्ल्यू डब्ल्यू. रिसर्चगेट.नेट/पब्लिकेशन/3485554333